International Journal of Sanskrit Research 2024; 10(2): 177-180

International Journal of Sanskrit Research

अनन्ता

ISSN: 2394-7519
IJSR 2024; 10(2): 177-180
© 2024 IJSR
www.anantaajournal.com
Received: 23-01-2024
Accepted: 27-02-2024

डॉ. प्रियंका
सहायकाचार्य संस्कृत
राजकीय अध्यापक
शिक्षामहाविद्यालय धर्मशाला,
हिमाचलप्रदेश, हिमाचल
प्रदेश, भारत

**Corresponding Author:**
डॉ. प्रियंका
सहायकाचार्य संस्कृत
राजकीय अध्यापक
शिक्षामहाविद्यालय धर्मशाला,
हिमाचलप्रदेश, हिमाचल
प्रदेश, भारत

# महाकवि कालिदास एवं पर्यावरण विज्ञान

डॉ. प्रियंका

सारांश
पर्यावरण का हमारे जीवन में महत्त्वपूर्ण स्थान है। पर्यावरण के बिना मानव जीवन की कल्पना करना भी असंभव है। पर्यावरण दो शब्दों के मेल से बनता है परि+आवरण। परि का अर्थ चारों ओर तथा आवरण का अर्थ है ढकना। इस प्रकार पर्यावरण का अर्थ है जिस शक्ति ने हमारे जीवन को चारों ओर से ढका है, वह पर्यावरण कहलाता है। इसके अन्तर्गत हमारे आसपास के सम्पूर्ण वातावरण को लिया जा सकता है जिसमें सम्पूर्ण प्राकृतिक परिवेश, नदियां, पर्वत, झरने, जंगल, समुद्र, पेड़-पौधे, जीव जन्तु आदि शामिल हैं। इनकी सुरक्षा से ही मानव जीवन सम्भव है। अतः हमें इनकी रक्षा में सदा तत्पर रहना चाहिए। पर्यावरण के साथ-साथ हमें मित्रवत् व्यवहार करना चाहिए ऐसा सन्देश हमें वैदिक समय से ही मिलता है। शायद इसी से प्रेरित होकर महाकवि कालिदास ने अपनी प्रत्येक रचना में पर्यावरण प्रेम को दर्शाया है । उनका प्रत्येक पात्र पर्यावरण से किसी न किसी प्रकार से जुड़ा ही है । लोकप्रिय रचना अभिज्ञानशाकुन्तलम् में तो पर्यावरण प्रेम स्थान स्थान पर देखने को मिलता है। वर्तमान समय की बात करें तो इस आधुनिक युग में पर्यावरण अत्यन्त दूषित हो चुका है। बड़े-बड़े भवनों का निर्माण करने में, फोरलेन आदि सड़क मार्गों का निर्माण करने में पेड़ों को अन्धाधुन्ध तरीके से काटा जा रहा है। जिसका प्रभाव हमारे स्वास्थ्य पर पड़ रहा है। हम अल्पायु में ही अनेक प्रकार के रोगों से ग्रसित होते जा रहें हैं । ऐसे समय में हमारा यह कर्तव्य है कि हमें पर्यावरण संरक्षण में अपना योगदान अवश्य देना चाहिए ।

कूटशब्द: महाकवि कालिदास, पर्यावरण, पेड़-पौधे, प्रकृति प्रेम, रघुवंशम्, शकुन्तला

## प्रस्तावना
पर्यावरण हमारे जीवन का अभिन्न अंग है। मानव जीवन के साथ पर्यावरण का शाश्वत सम्बन्ध रहा है। पर्यावरण में हमारे आसपास के सभी पेड़-पौधे, जीव-जन्तु, पादप, नदियां, झरने पशु तथा विभिन्न वनस्पतियाँ आदि सम्मिलित है। प्राचीन ऋषि तो औपधि को देवी व माता मानते हुए उसकी प्राप्ति हेतु अपना सब कुछ यहाँ तक कि स्वर्य को भी समर्पित करने में तत्पर रहते थे।[1] वैदिक ऋषियों का

मानना है कि जो मनुष्य पेड़-पौधों के साथ अमैत्री का भाव रखता है वह स्वयं को नष्ट कर लेता है | इसी कारण वेदों में वनस्पतियों के साथ मैत्रीवत व्यवहार करने का उपदेश दिया गया है।[2] पर्यावरण की महत्ता को ध्यान में रखते हुए ही महाकवि कालिदास ने भी अपनी सभी रचनाओं में पर्यावरणीय तत्वों को विशेष रूप से वर्णित किया है।

इसका प्रत्यक्ष प्रमाण हमें अभिज्ञानशाकुन्तलम् के मंगलाचरण में देखने को मिलता है। उन्होंने इस मंगलाचरण में पर्यावरण के आठ मुख्य व लाभकारी तत्वों का अल्लेख किया है- जल, अग्नि यजमान, सूर्य, चन्द्र, आकाश, पृथिवी व वायु।[3] कवि ने इन आठों तत्वों के प्रति पूजनीय भाव प्रदर्शित करते हुए मानव मात्र के कल्याण की प्रार्थना की है। सर्वप्रथम जल रूपी शिव मूर्ति की प्रार्थना के माध्यम से शुद्ध जल की कामना की गई है। इसी प्रकार क्रमशः अग्नि, यजमान, सूर्य, चन्द्र, आकाश, पृथिवी तथा वायु आदि प्राकृतिक तत्त्वों की शुद्धता व पवित्रता तथा उनके संरक्षण की कामना की गई है। कवि का पर्यावरण के प्रति इतना अधिक लगाव है, कि उनके आश्रम की कन्याएँ भी आश्रम के वृक्षों एवं लताओं के साथ सोदर स्नेह रखती हैं।[4] इसके अतिरिक्त आश्रम में रहने वाले सभी पात्र पेड़-पौधों के साथ तदात्म्यता का भाव रखते हुए उनका सेंचन करते हैं। जब राजा दुष्यन्त रथ पर सवार होकर आश्रम में मृग को अपना शिकार बनाना चाहते हैं तब आश्रम के तपस्वी राजा के रथ के सामने हृढतापूर्वक खड़े होकर उस मृग के प्राणों की रक्षा हेतु अपना बलिदान देने को भी तैयार हो जाते हैं।[5] कालिदास के पात्रों का पेड़-पौधों व मृगादि प्राणियों के प्रति, यह स्नेह उनके पर्यावरण प्रेम का ही प्रतीक है। पर्यावरण प्रेम का सबसे बड़ा उदाहरण हमे शकुन्तला के रूप में देखने को मिलता है। कवि की नायिका शकुन्तला आश्रम के वृक्षों को पुत्रवत् प्रेम करती है। वृक्षों का सेंचन करने से पहले जल ग्रहण न करना, स्नेहवश प्रिय होने पर भी एक पत्ता भी च तोड़ना और वृक्षों व लतायों पर प्रथम पुष्प प्रसूति को त्योहार की तरह अनुभव करके प्रसन्नता व्यक्त करना उनके पर्यावरण प्रेम की पराकाष्ठा को ही प्रकट करता है।

पर्यावरण प्रेम का एक अन्य उत्कृष्ट उदाहरण मृग शावक का है। जिसका पालन पोषण शकुन्तला अपने पुत्र के समान करती है। उस मृगशावक को जन्म देने के पश्चात् ही उसकी माता की मृत्यु हो जाती है। जब वह शावक प्रथमवार कुशा खाने का प्रयत्न करता है तो उसके काँटे उसके कोमल मुँह में चुभने से घाव बन जाते हैं। उन घावों को भरने के लिए शकुन्तला अपने हाथों से इंगुदी का तेल लगाती है। और तत्पश्चात वह उस मृग शिशु को अपने हाथों से ही सावाँ की मुठ्वी देकर उसका पालन पोषण करती है। उस शिशु को भी शकुन्तला से मातृवत् स्नेह हो जाता है। इसी प्रेमवश शकुन्तला के पतिगृह जाने के समय अलग होने की कल्पना से व्याकुल होकर वह मृग शकुन्तला को मार्ग रोक कर खड़ा हो जाता है।[7] प्रकृति के प्रति इस प्रकार की आत्मीयता और प्रेम को, प्रकट करने में कालिदास काफी सफल रहे हैं। कवि की वन्य जीव एवं वृक्षादि के प्रति ऐसा भाव एवं प्रेम की यह भावना पर्यावरण को सुरक्षित करने में सहायक हो सकती है।

प्रकृति प्रेम का ऐसा भाव हमें अधिकांश कालिदास के चरित्र में देखने को मिलता है । शकुन्तला का आश्रम के प्रत्येक प्राकृतिक तत्व के प्रति अनन्था प्रेम रहा है चाहे वह पेड-पौधे हो या जीव जन्तु। इसी प्रेम के कारण शकुन्तला की विदाई के अवसर पर अत्याधिक दुख व्यक्त करते हुए हरिणियौं अपनी चबाई हुई कुशा को उगल रही हैं, मोरों ने नाचना छोड़ दिया है और लताएं पीले पत्तों के रूप मैं अपने आँसू बहा रहीं हैं।[8] इसी तरह के कई अन्य दृष्टान्त हमें कवि की अन्य कृतियों में देखने को मिलते हैं । रघुवंश के आश्रम परिसर में वन्य प्राणियों को देखें तो वहाँ सिंह भी अपने हिंसक भाव का परित्याग करके यज्ञ वेदी के पास ही विश्राम करते हैं ।[9] इसके अलावा इसी रचना में कवि ने प्राकृतिक तत्वों नदी, झरनों आदि के जलों की शुद्धता[10] तथा वायु के प्रदूषण मुक्त होने की प्रार्थना करके[11] प्रकृति के प्रति अपने प्रेम को प्रदर्शित किया

है।

रघुवंश महाकाव्य में कवि ने तपस्वियों के माध्यम से पर्यावरण के प्रति जागरूकता को दर्शाया हैं । आश्रम के तपस्वी थांवले बनाकर बड़े ही स्नेहपूर्वक इनका पालन पोषण-पुत्र के समान करते हैं। जब इसी मार्ग से पथिक गुजरते हैं तो वह इसकी छाया और शुद्ध वायु का सेवन करके ही अपनी थकान को दूर करते है।[12] शकुन्तला की विदाई के समय जिस प्रकार की आत्मीयता को कवि ने व्यक्त किया है उसी प्रकार की आत्मीयता को परित्यक्त सीता के संदर्भ में भी कवि ने बड़े सुन्दर शब्दों में व्यक्त किया है। जब श्रीराम द्वारा लोकानुराग हेतु छोड़ी गई सीता कुररी के समान रुदन करती है तो वाल्मीकि आश्रम के मोर शोक से विह्वल होकर नाचना छोड़ देते हैं । वृक्ष फूलों के आंसू बहाने लगते हैं। अधिक तो क्या यहाँ सीता के दुख को अपना दुख मान सम्पूर्ण जंगल ही रोने लगता है।[13]

कवि ने प्रायः अपनी सभी रचनाओं में वृक्ष सेचन के कार्य को विशेष महत्व देकर और उसे पुत्र के पालन –पोषण के समान मानकर अपने पर्यावरण प्रेम को व्यक्त किया है । इसके प्रमुख उदाहरणों में माँ पार्वती द्वारा पुत्रवत पाले गए देवदारु के वृक्ष का है। इसे भगवान शंकर भी अपना पुत्र मानते है तथा यह वृक्ष माँ पार्वती के वक्ष से निकले हुए दूध रूपी जल के स्वाद को भी जानने वाला है।[14] जहाँ तपस्या करती हुई माँ पार्वती छोटे-छोटे पौधों को पुत्र के समान सींचा करती थी।[15] इसी प्रकार मेघदूत में भी यक्षिणि छोटे कल्प वृक्ष का पालन-पोषण पुत्र के समान ही करती है ।

इस प्रकार कालिदास की पर्यावरण के प्रति के प्रति ऐसी उत्कृष्ट भावना से हमें पर्यावरण संरक्षण के लिए हर समय जागरूक रहना चाहिए तभी हम मनुष्य के स्वस्थ जीवन की कल्पना कर सकते हैं । हमें अनावश्यक कभी भी पेड़ों को नहीं काटना चाहिए और नदी – नालों में भी कूड़ा – कर्कट नहीं फेंकना चाहिए।

संदर्भग्रंथ सूची


1. औषधीरिति मातरस्तद्वो देवीरूपब्रूवे।
   स नेयमश्वं गां वास आत्मानं तव पूरूष॥ ऋग्वेद, 10.97.4
2. अस्य ते सख्य व्यमियक्षन्तस्त्वोत्तय:॥ वही, 9.31.6
3. या सृष्टि स्रष्टुराद्या वहतिविधिहुतं याहविर्या च होत्री ये द्वे कालं, विधत:श्रुतिविषयगुणा या स्थिता व्याप्य विश्व।
   यामाहु: सर्वबीजप्रकृतिरिति यया प्राणिन: प्राणवन्त:
   प्रत्यक्षाभि: प्रपन्नस्तनुभिरवतु वस्ताभिरष्टा भिरीष:॥ अभिज्ञानशाकुंतलम्,1.1
4. न केवलं ततनियोग एव । अस्ति मे सोदरस्नेहोऽप्येतेषु । वहीं, 1.18
5. भो भो राजन् । आश्रम मृगोऽयं न हन्तव्यो न हन्तव्यः। वहीं, 1.9
6. पातुं न प्रथमं व्यवस्यति जलं युष्माष्वपीतेषु या नादत्ते प्रियमण्ड
7. यस्य त्वया व्रणविरोपणमिंगुदीनां तैलं न्यशिच्यतमुखे कुशसूचीविध्दे।
   श्यामाकमुष्टि परिवर्धितको जहाति सोऽयं पुत्रकृतक: पदवीं मृगस्ते॥ वही, 4.14
8. उदगलितदर्भ कवला मृग्यः परिरुयक्तनर्तना मयूराः ।
   अपसृतपाण्डुपत्रा मुचन्त्यश्रूणीव लताः॥ वही, 4.12
9. रघुवंशम्,14.79
10. वही, 5.7
11. वही, 5.6
12. आधारबन्धपर्मुखैः प्रयत्नैः संबर्धितानां सुतनिर्विशेषम् ।
    क्वचिन्न वाय्वादिरूपप्लवो व: श्रमच्छिदामाश्रमपादपानाम् ।। वही, 5.65
13. नृत्यं मयूराः कुसुमानि वृक्षा दर्भानुपात्तान्वि जहुर्हरिण्यः ।

तस्याः प्रपन्ने समदुःखभावमत्यन्तमासीद्रुदितं वनेऽपि ।। वही, 14.69

14. अमुं पुरः पश्यसि देवदारु पुत्रीकृतोऽसौ वृषभध्वजेन ।
यो हेमकुम्भस्तननिः सृतानां स्कन्दस्थ मातुः पयसां रसज्ञः । वहीं, 2.36
15. अतन्द्रिता सा सव्यमेव वृक्षकान्धघटस्तनप्रस्रवणैर्व्यवर्धयत् ।
गुहोऽपि येषां प्रथमाप्तजन्मनां न पुत्रवात्सल्यमपकारिष्यति॥ कुमारसंभवम्, 5.14
16. मेघदूतम्, उत्तरभाग, 15